१ ओअंकार (ੴ) सति गुर प्रसादि

सिक्ख रहत मर्यादा

तुल्नातमिक धर्म अध्ययन

>< >< >< >< >< >< >< >< >< >< ><

मूल रूप में

सिक्ख मिशनरी कॉलेज (रजि.)
लुधियाना द्वारा प्रकाशित पुस्तक

क्रांतिकारी जगत् गुरू नानक देव चैरिटेबल ट्रस्ट, चण्डीगढ़

लॉन्च करता : जसबीर सिंध

Mob. : 099881-60484, 62390-45985

Type Setting : Radheshyam Choudhary

Mob. : 098149- 66882

Download Free

योग – दर्शन तथा गुरमत

योग मत से भिन्नता

(क) योग का इतिहास : तपस्या तथा त्याग का हिन्दुस्तान में एक लम्बा इतिहास है। योग की यह प्रणाली वेदों, उपनिषदों तथा महाभारत काल में भी पाई जाती थी। सिकंदर ने जब हिन्दुस्तान पर आक्रमण किया, उस समय भी आराधना का यह ढंग आम पाया जाता था। उसने इनका वर्णन अपनी लिखतों में दिया है। महात्मा बुद्ध के समय यह प्रणाली आम प्रचलित थी। 150 बी. सी. के लगभग पतंजली ने इन तपस्याओं की विधियों तथा परम्पराओं को एक स्थान पर एकत्र किया तथा उसके इस ग्रंथ को अभी तक मूल पाठ के रूप में प्रयोग किया जा रहा है।

उपनिषदों में योग का भाव यह नहीं लिया जाता जो पतंजली लेता है। उपनिषदों के अनुसार मनुष्य की आत्मा से बिछुड़ी मानी जाती है। यह वियोग ही मनुष्य के सारे दु:खों तथा विपदाओं का परम – आत्मा का मेल हो जाए। अत: उपनिषदों के समय तप का मनोरथ आत्मा तथा परम – आत्मा का यह मिलाप था तथा इसे इसलिए योग (जोड़ना) कहा जाता था।

पतंजली, योग का भाव इससे उल्ट लेता है। वह योग को 'वियोग' के भाव में प्रयोग करता है। पतंजली का 'योग मत' कपिल के सांख शास्त्र से मिलता जुलता है। सांख शास्त्र दो प्रारम्भिक वस्तुएं मानता है – एक प्रकृति (माया) तथा दूसरी पुरुष (आत्मा)। पतंजली का योग से भाव है प्रकृति तथा पुरुष को अलग अलग करना। मनुष्य प्रकृति (माया) तथा पुरुष (आत्मा) का बना हुआ है। मनुष्य की आत्मा इन्द्रियों तथा मन की पकड़ से आज़ाद कराना होता है। यह तब ही हो सकता है यदि मनुष्य की भौतिक तथा मानसिक इच्छाओं को कंट्रोल किया जाए तथा कठोर अनुशासन में रखा जाए।

(ख) पतंजली का योग – फलसफा : –

पतंजली का योग फलसफा सांख शास्त्र से बहुत मिलता जुलता है पतंजली सांख शास्त्र के 25 तत्त्वों को मानता है। इस के मुख्य अंग ये हैं :

1. **ब्रह्मांड :** पतंजली अनुसार यह ब्रह्मांड किसी की सृजना नहीं, यह अनादि वस्तु है। मादी रूप में इस ब्रह्मांड को 'प्रकृति' कहा जाता है।

2. **आत्मा :** इस ब्रह्मांड में अनेकों रूहें हैं जो जीव को जीवन देती हैं। यह रूहें पवित्र, अनादि तथा अमर हैं। परन्तु इस ब्रह्मांड के साथ मिल कर यह दु:ख, सुख को भोगती हैं। वास्तविकता (सत) की अज्ञानता के कारण मनुष्य में भौतिक इच्छाएं **उत्पन्न** होती हैं, जिनसे दु:ख तथा आपदाएं उत्पन्न होती हैं। अत: अविद्या ही सारे आवागवन के चक्र का कारण है। इस जन्म – मृत्यु, भाव आवागवन के चक्र से बचना अत्यावश्यक है।

3. **मुक्ति :** पुरुष तथा प्रकृत्ति को अलग अलग करने से मुक्ति प्राप्त होती है। इस मुक्ति की प्राप्ति का साधन ज्ञान नहीं, बल्कि ध्यान टिकाना तथा समाधि है। योग मत में मन को संयम में रखने वाली कसरतें दी गई हैं। योग का मनोरथ व्यक्ति को माया (मादा) की जकड़ से निकालना है। 'चित' मादे का सबसे ऊँचा तथा विकसित रूप है। 'योग' वह मार्ग बताता है, जिस द्वारा मनुष्य प्रकृतिक कर्तव्यों से पीछे हट कर ही सांसारिक दु:खों से बचा जाता है। इस 'चित' में तीन वस्तुओं का मेल होता है : बुद्धि, स्वचेतनता तथा मन।

मुक्ति-प्राप्ति के लिए योग का मुख्य कार्य मानसिक क्रियाओं को दबाना है। इसका भाव गूढ़ी नींद नहीं। योग, समाधि की सहायता से चेतनता की बाह्य तहों को पार करके भीतर प्रवेश कर रही शक्ति से जाकर मिलना है।

(ग) योग की कला : मनुष्य अपने वास्तविक तत्त्व या 'स्वयं' को मन के बाह्य इस्तेमाल से नहीं पहचान सकता। इस तत्व की पहचान के लिए के लिए मानसिक क्रियाओं को दबाना पड़ता है जिनसे हमारा साधारण जीवन दैवी स्वभाव को छिपा कर रखता है। हालांकि हम सब में आत्मा रहती है परन्तु हमें इसकी चेतनता नहीं होती क्योंकि यह चेतनता अन्य बाह्य वस्तओं में बहुत लिप्त होती है। इस चेतनता को आत्मा की ओर फलसफा इस बात पर बल देता है। कि मानसिक दशा का यह आवश्यक संयम, मानसिक इच्छाओं को जीतने से प्राप्त होता है।

मानव-जीवन में पुरुष (आत्मा) के अतिरिक्त भौतिक शरीर, प्राण तथा मन होते हैं। यह आत्मा भोगों की चेष्टा तथा बेचैन मन के पर्दे के नीचे छिपी होती है जो कि योग के रास्ते में एक अवरोध बनते हैं। इस उचाट वृति के कई अन्य साथी होते हैं जैसे कि दु:ख उदासी, शारीरिक अस्थिरता, सांस लेना तथा बाहर निकालना आदि। शारीरिक स्वास्थ्य जीवन-आदर्श नहीं है परन्तु यह वास्तविक आदर्श की प्राप्ति के लिए एक आवश्यक साधन है। आदर्श की प्राप्ति के रास्ते में अवरोधों को दूर करने के लिए योग निम्नलिखित अष्ट-मार्ग प्रस्तुत करता है:

1. **यम :** योग के अभ्यास के लिए पहले कुछ नैतिक तैयारी करनी पड़ती है। योगी को पहले निम्नलिखित गुण अपने में उत्पन्न करने पड़ते हैं : अहिंसा, सत्य, नेक नीति, जत सत (विषय-निरोध), दान स्वीकार न करना।

अहिंसा का भाव है : ''किसी को भी मत मारो''। यह दो-अक्षरी आदेश है। स्व-रक्षा में भी किसी को मारने की आज्ञा नहीं है। इसके अतिरिक्त अहिंसा का अर्थ है किसी से भी घृणा न करना, किसी से ईर्ष्या नहीं करनी तथा अपने स्वभाव में उदारता रखना है।

2. **नियम :** यह आंतरिक तथा बाह्य शुद्धि है। इससे वैराग्य तथा भौतिक इच्छाओं से स्वतन्त्रता मिलती है।

3. **आसन :** समाधि लगाने के लिए आसन एक शारीरिक साधन है। हम दौड़ते-भागते या सोते हुए किसी वस्तु पर अपना ध्यान नहीं टिका सकते। समाधि आरम्भ करने से पूर्व एक सुखद-आसन पर बैठना आवश्यक है। यह आसन स्थिर, सुहाना तथा सरल होना चाहिए। यह शरीर ऐसा बन हुआ है कि इसे पशुओं वाले विषय का आधार भी बनाया जा सकता है तथा दैवी सत्ता का भी। योगी को ऐसी वस्तुएं खानी-पीनी नहीं चाहिएं जो उसमें बेचैनी या मदहोशी उत्पन्न करें। शारीरिक आवश्यकताएं बौद्धिक जीवन एवं नैतिक क्रिया के अधीन होनी चाहिएं।

4. **प्राणायाम :** मन की निर्मलता सांस को नियन्त्रित करके प्राप्त की जा सकती है। श्वास का नियन्त्रण मन में स्थिरता उत्पन्न करने वाला प्रभाव रखता है। यह छायावादी सत्ता उत्पन्न करता है। कई बार यह सम्मोहन (Hyponosis) ला देता है। प्राणायाम द्वारा शेष इन्द्रियां भी निष्क्रिय हो जाती हैं। इस नियन्त्रण को पूरक, रेचक तथा कुंभक कहते हैं।

5. **प्रत्याहार :** इसका भाव है अपनी इन्द्रियों को अपने प्राकृतिक कर्तव्य करने से रोकना। इसका उद्देश्य यह होता है कि मन पर प्रभाव डालने वाली सभी वस्तुओं को दूर रखना है। इस नियन्त्रण के लिए व्यर्थ के वेगों तथा बार-बार आने वाले विचारों को दूर रखना होता है।

6-7. **ध्यान तथा धारण :** इसका भाव है ध्यान टिकाना। सत या सत्यता का ज्ञान तभी होता है जब चेतनता को बाह्य तथा भीतरी परिवर्तनों से निरन्तर बचा कर रखा जाए। इस मन को किसी अन्य दिशा में जाने से पर्याप्त समय तक रोका जाए। ऐसा करने के लिए ध्यान किसी एक स्थान पर टिकाना होता है। साधारण जीवन में कभी कोई ख्याल आ जाता है, कभी कोई। मन कभी किसी वस्तु पर चला जाता है तथा कभी किसी पर। यह कभी एक स्थान पर अधिक ठहरता ही नहीं। यदि टिकता है तो बहुत कम समय के लिए। ध्यान तब टिकता है जब बाहर से व्यवधान डालने वाली कोई बात न हो। ध्यान टिकाने से अन्ततः समाधि लग जाती है जब योगी स्वयं तक को भूल जाता है। तन तथा मन बाह्य प्रभावों के लिए मर जाते हैं। केवल ध्यान टिकाने वाली वस्तु ही दृष्टिगोचर हो रही होती है। जब योगी अपने तन तथा मन को बाह्य प्रभावों से पूर्ण रूप से मार ले तब उस में बड़ी शक्तियां उत्पन्न हो जाती हैं। वह दीवारों में से देख सकता है, स्वयं अदृश्य हो सकता है, दूसरों के मन की बात जान सकता है। परन्तु यह सिद्धियां मुक्ति प्राप्त करने के रास्ते में रुकावट बन जाती हैं।

8. **समाधि :** यह योगी की विस्माद की अवस्था होती है, जब उसका सम्बन्ध बाह्य भौतिक संसार से बिल्कुल टूट जाता है। यही योगी का लक्ष्य होता है। योगी की आत्मा इस मायावी हद से ऊपर उठ जाती है तथा अनादि सत्ता बन जाती है।

इस अवस्था में आकर योगी सत्य का ज्ञान अनुभव द्वारा प्राप्त कर लेता है। इस अनुभव द्वारा प्राप्त किया ज्ञान तथा धर्म-ग्रंथों द्वारा प्राप्त किए ज्ञान से भिन्न होता है। यह सीधा प्रत्यक्ष ज्ञान होता है। समाधि

एक निरन्तर अनुभव होता है। यह कई बार बीच में ही टूट जाता है। धीरे-धीरे यह अनुभव जुड़ जाता है तथा योगी अचेत अवस्था में चला जाता है। यहां वह अनहद शब्द की आवाज़ सुनता है। इसको दसवां द्वार भी कहते हैं।

समाधि की अवस्था तक पहुंचने से पहले योगी के सभी प्रयत्न निष्फल हो जाते हैं। जब 'पुरुष' को प्रकृति से वह अलग कर देता है तब उसकी आत्मा का सकारात्मक प्रकट होना आरम्भ हो जाता है। यह समाधि का सर्वोच्च रूप होता है। यह आत्मा तथा शरीर पूर्ण रूप से अलग-अलग हो जाते हैं। यह एक शान्ति की ऐसी दशा उत्पन्न हो जाती है, जहां बाहर का कोई झगड़ा या घटना प्रभाव नहीं रखती। यह रहस्यमयी अवस्था होती है, जिसे कोई वर्णन नहीं कर सकता। यह अवस्था अधिक देर तक नहीं रह सकती। कुछ देर पश्चात् यह हट जाती है।

(घ) परा-प्राकृतिक शक्तियां : जादू का अलौकिक मार्ग योग की मुक्ति की इस प्रणाली के साथ घुल मिल गया है। योग के साधनों के समय योगी कुछ जादू की शक्तियां प्राप्त कर लेता है। परन्तु योगी का वह वास्तविक आदर्श नहीं। वास्तविक जीवन-मनोरथ पुरुष को प्रकृति से अलग करके मुक्ति प्राप्त करना है। यदि परा-प्राकृतिक शक्तियां प्राप्त करके योगी जादूगरी में पड़ जाए तब वह अपने मुक्ति के निशाने से चूक जाता है। फिर भी ये पहली सात अवस्थाएं बिना लाभ के नहीं। प्रत्येक का कोई न कोई लाभ अवश्य है। आसनों द्वारा योगी इतनी शक्ति प्राप्त कर लेता है कि इस पर गर्मी-सर्दी का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। इनसे परा-इन्द्रिय वस्तुओं का ज्ञान प्राप्त हो जाता है। योगी पर्याप्त दूरी से वस्तुएं देख सकता है तथा आवाज़ें सुन सकता है। वह दैत्य की भौतिक शक्ति प्राप्त कर सकता है। उसे भूत काल का ज्ञान हो जाता है। वह दूसरे के मन के भाव पढ़ लेता है। वह भूत, वर्तमान तथा भविष्य को जान सकता है। वह अपने आप को अदृश्य कर सकता है उसे आप मृत्यु का ज्ञान हो जाता है। वह ब्रह्मांड तथा आकाश का ज्ञान प्राप्त कर लेता है।

यह शक्तियां या सिद्धियां समाधि के मार्ग में रुकावटें बन जाती हैं। यह उच्च जीवन की सह-उपज होती हैं। मुक्ति की प्राप्ति तो इन शक्तियों का ख्याल छोड़ कर ही हो सकती है। जो योगी इन सिद्धियों की प्राप्ति की ओर चल पड़े वह नीचे गिर जाता है।

ये सिद्धियां चार तरह से प्राप्त हो सकती हैं : जन्म जात औषधि, से, मन्त्रों से, तपस्या से तथा समाधि से। परन्तु समाधि पर अधिक बल दिया गया है।

(ड.) रब (परमात्मा) : पतंजली के मत का ईश्वरवाद आवश्यक तथा महत्वपूर्ण भाग नहीं। शरवसी रब योग, ध्यान तथा समाधि का एक साधन है। वैसे पतंजली ईश्वर को मानता है परन्तु उसे सृजन करता नहीं मानता। ईश्वर हर युग में ईश्वरीय बाणी का एलान करता है। **'ओम'** की आवाज़ ईश्वर की प्रतिनिधि है तथा इसके जाप से मन ईश्वर पर टिक जाता है।

मनुष्य का आदर्श ईश्वर से मेल नहीं। वास्तविक जीवन-मनोरथ 'पुरुष' तथा 'प्रकृति' को अलग अलग करना है। ईश्वर 'पुरुष-विशेष' है तथा सिरजनहार तथा पालनहार नहीं। वह मनुष्यों को उनके कर्मों की न सज़ा देता है तथा न ही कोई पारितोषिक। योग फलसफे ने तो ईश्वर का संकल्प केवल युग-अनुसार चलने के लिए ही दिया था।

(च) गोरख नाथ का योगमत : योगी दो प्रकार के हैं, एक औघड़ तथा दूसरे कनफटे। कनफटे योगियों का आचार्य गोरख है। आदि नाथ नेपाल का एक महापुरुष था। यह बोधि- देवता था। उसका चेला मछंदर नाथ था। मछंदर नाथ के आगे बहुत से चेले थे। इनमें से एक गोरख नाथ था। गोरख नाथ अपने गुरू मछंदर नाथ से बहुत अधिक तरक्की कर गया था। गोरख नाथ जी ने अपने चेलों के कान पड़वाए तथा मुंदरें पहनाईं। अत: उसके मत को कनफटे योगियों का मत कहा जाता है। गोरख नाथ कबीर जी का समकाली था। अत: गोरख नाथ का सम्बन्ध बुद्ध मत से बन जाता है। गोरख नाथ ने बुद्धमत के महायान फिरके को शैव मत में बदल दिया। इस प्रकार योग मत का सम्बन्ध शैव मत से भी जुड़ गया।

गोरख के योगियों के आगे बारह फिरके हैं : (1) हेतु, (2) पाण, (3) आई, (4) गम्य, (5) पागल, (6) गोपाल, (7) कंथड़ी, (8) बन, (9) ध्वज (10) चोली, (11) रावल, तथा (12) दास। ये गोरख नाथ के योगी कानों में मुद्राएं पहनते हैं, खपर पकड़ कर भिक्षा मांगते हैं, टाकिओं की बनी खिंथा गोदड़ी पहनते हैं, एक डंडा पास रखते हैं, गले में नाद तथा सिडी लटका कर रखते हैं, जिन्हें ये बजाते हैं। ये गृहस्थ आश्रम में नहीं पड़ते। बस्ती से दूर रहते हैं। शरीर पर राख मलते हैं तथा सिर पर जटाएं रखते हैं।

(छ) योग मत का मानव जीव-विज्ञान (Physiology) :

योग मत का अपना ही जीव विज्ञान है, जो आजकल के जीव-विज्ञान से बिल्कुल नहीं मिलता। यह जीव विज्ञान उन नसों के सम्बन्ध में है जो सारे शरीर में प्रवेश कर रही हैं। यह इस समय के तन्तुओं **(Nerves)** के साथ समरूप नहीं। शायद ये इतनी बारीक हों कि दिखाई ही न देती हों। इनकी गिणती 70 करोड़ के लगभग बताई जाती है। ये कई चक्रों में जाकर मिलती हैं। रीढ़ की हड्डी के नीचे सिरे पर एक कुंडलनी है जो ऊर्जा का केन्द्र है, जो शेष चक्रों को क्रियाएं करने के लिए उत्तेजित करती है। इस रीढ़ की हड्डी में विशेष महत्व रखने वाली तीन बड़ी नाड़ियाँ जाती हैं : इड़ा, पिंगला तथा सुखमना। सुखमना सबकी सिरमौर है।

इसके दाईं ओर पिंगला है तथा बाईं ओर इड़ा है। इस नाड़ी के छ: केन्द्र हैं, जिन्हें पदम कहते हैं। यह पदम देखे नहीं जा सकते। ये चक्र मानसिक ईश्वरीय शक्ति के केन्द्र हैं। सबसे निचले चक्र में ब्रह्म निवास करता माना गया है जो शिवलिंग के रूप में है तथा उसके गिर्द सर्पनी देवी कुंडल मारे बैठी है। इस देवी को इस आसन में कुडलनी कहते हैं। इसे जगा कर करामाती शक्ति उत्पन्न की जाती है।

अभी तक डाक्टरों **(Surgeons)** ने ऐसी कोई वस्तु नहीं देखी।

(ज) अनहद शब्द तथा दसम द्वार :

योग मत का यह विचार है कि यदि सभी इन्द्रियों को शिथिल कर दिया जाए तब दसवां द्वार खुलता है जिसके द्वारा मनुष्य सत का ज्ञान प्राप्त करता है। उसे एक अदृश्य आवाज़ सुनाई देती है जो बड़ी उच्च कोटि का संगीत होता है। इसे अनहद शब्द कहते हैं। यह एक असीमित तथा अनादी संगीत है जो हर समय बज रहा होता है। परन्तु यह सुनाई दसवें द्वार में ही देता है। इस शरीर में नौ दरवाज़े हैं जो सभी को दिखाई देते हैं। यह दसवां द्वार दिखाई नहीं देता। इस द्वारा परा-इन्द्रिय ज्ञान होता है। यह ज्ञान का परा-इन्द्रिय माध्यम है। योगी इस संगीत को समाधि की अवस्था में सुनते हैं।

(झ) योग का विरोध :

सिख धर्म योग के सारे फलसफे तथा इसके सारे साधनों के साथ सहमत नहीं। योग मत के कई अंगों का वह कड़ा विरोध करता है।

1. प्रकृति तथा पुरुष का संकल्प :

योग मत सांख्य शास्त्र के साथ मिलता जुलता है। सांख्य शास्त्र की तरह पतंजली दो अनादी तथा प्रारम्भिक वस्तुएं मानता है : एक प्रकृति (माया) तथा एक पुरुष (आत्मा)। सिख धर्म इसका कड़ा विरोध करता है। सिख धर्म के अनुसार सारी सृष्टि की सिरजना करने वाला एक वाहिगुरू है तथा प्रकृति (माया) अनादी नहीं। यह सृष्टि उस वाहिगुरू का अपना ही पसारा है। गुरू नानक साहिब फुर्मान करते हैं:

"सुंन कला अपरंपरि धारी ॥ आपि निरालमु अपर अपारी ॥

आपे कुदरति करि करि देखै सुंनहु सुंन उपाइदा ॥" (मारू, म: 1, 1037)

2. ईश्वर का संकल्प :

योग मत ईश्वर को केवल ध्यान टिकाने का साधन मानता है, उसे सिरजनहार, पालनकर्ता तथा कर्मो का फल देने वाला नहीं मानता। सिख धर्म ईश्वर को सिरजना करने वाला, सर्व-शक्तिमान, पालनहार तथा दातार मानता है। गुरू नानक देव जी फुर्माते हैं :

"दाता करता आपि तू तुसि देवहि करहि पसाउ ॥" (आसा, म: 1, 463)

यथा

नदीआ विचि टिबे देखाले थली करे असगाह ॥

कीड़ा थापि देइ पातिसाही लसकर करे सुआह ॥ " (माझ, म: 1, 144)

यथा

"दीना नाथु दइआलु निरंजनु अनदिनु नामु वखाणा ॥" (धनासरी, म: 1, 689)

3. वियोग तथा संयोग :

योग का जीवन आदर्श प्रकृति (मांया) तथा पुरुष (आत्मा) को अलग-अलग करना है। योग के लिए यही मुक्ति है। वे इसे वियोग कहते हैं। योगियों का आदर्श नकारात्मक है। सिख धर्म इससे आगे जाता है। वह सकारात्मक पक्ष पर बल देता है। सिख धर्म की शिक्षा यह है कि आत्मा तथा परम-आत्मा के बीच पड़ी हउमै तथा भौतिक तृष्णाओं की दीवार को गिरा कर आत्मा तथा परम-आत्मा का संयोग करना है। आत्मा को परम-आत्मा में लीन करना है। वास्तविक मुक्ति यह है।

श्री गुरू नानक देव जी कहते हैं :

"साचौ उपजै साचि समावै साचे सूचे एक मइआ ॥

झूठे आवहि ठवर न पावहि दूजै आवा गउणु भइआ ॥" (रामकली, म: 1, 140)

जीव सत्य से उपजते हैं, परमात्मा की आराधना से सत्य में समा जाते हैं। शेष आवागमन में पड़ जाते हैं:

4. सिद्धियां :

योगी अपनी साधना से परा-प्राकृतिक शक्तियां प्राप्त कर लेता है जिन्हें सिद्धियां कहते हैं। इस प्रकार वह करामातें दिखवाने लग जाता है। ये करामातें इस ब्रह्मांड के भौतिक नियमों के विरुद्ध होती हैं, जैसे कि शरीर को बढ़ा लेना, छोटा कर लेना, भारी कर लेना, अपनी इच्छा पूरी कर लेना, किसी को वश में कर लेना आदि। ये सिद्धियां धारण तथा ध्यान से उत्पन्न हो जाती हैं। यह आत्मिक बल होता है। इस पर प्रकृति के भौतिक नियम लागू नहीं होते, परा-भौतिक नियम लागू होते हैं।

इस बढ़ी हुई शक्ति को हम दो कार्यो में लग सकते हैं : एक अपनी भौतिक तृष्णाएं पूरी करने तथा तमाशे दिखवाने में तथा दूसरा परम-आत्मा में लिव लगाने में। सिख धर्म की शिक्षानुसार हमारा जीवन मनोरथ आत्मा तथा परम-आत्मा का मेल है। यदि हमने सिद्धि प्राप्त करके अपनी भौतिक तृष्णाएं ही पूरी करनी हैं तब हम अपने पावों आप ही कुल्हाड़ा मार लेंगे क्योंकि इससे हम अपना आदर्श छोड़ देते हैं। हमारी भौतिक तृष्णाएं हमारी आत्मा तथा परम- आत्मा के बीच एक दीवार बन जाती हैं। सिद्धियों की शक्ति हउमै उत्पन्न करती है तथा यह भी आत्मा तथा परमात्मा के बीच एक दीवार का काम देती है, जिसे गिराना हमारा जीवन-आदर्श है। सिद्धियां प्राप्त करके फिर तृष्णाएं पूरी करना तथा हउमै उत्पन्न करनी तो उस व्यक्ति के कार्य की तरह है जिसने कोई पत्थर उठा कर किसी ऊँची चोटी पर पहुंचाना हो। वह पत्थर उठा कर चोटी पर पहुंच जाता है परन्तु वहां पहुंच कर उसे नीचे लुढ़का देता है तथा फिर उसे ऊपर उठाने के लिए चल पड़ता है।

धिग सिधी धिग करामात ।।

बाझहु सचे नाम दे होर करामात असाथे नाहीं ।। (भाई गुरदास)

श्री गुरू नानक देव जी को योगियों ने करामात दिखाने के लिए कहा परन्तु उन्होंने इन्कार कर दिया तथा फुर्माया :

"आपि नाथु नाथी सभ जाकी

रिधि सिधि अवरा साद ।।" (जपुजी, पगड़ी 29)

हमारा नाथ हमारा प्रभु है। उसने सारी दुनिया नाथी हुई है। तुम रिद्धियों-सिद्धियों की चेटकों में हो। हम इन्हें परमार्थ से अनजान लोगों का स्वाद समझते हैं।

इस बीसवीं सदी का एक पश्चिमी फिलास्फर 'हक्सले' यह कहता है कि करामाती शक्तियों का उत्पन्न करना इन्सान की आत्मा को वास्तविकता तथा सत्य से दूर ले जाता है तथा प्रबुद्धता व मुक्ति के मार्ग में न पार कर सकने वाली रुकावटें पैदा कर देता है।

(5) **गृहस्थ आश्रम :**

योगमत योगी को गृहस्थ त्याग कर घरों तथा बस्तियों से दूर रहने को कहता है। योगी का डेरा जंगलों में होना चाहिए तथा इसे मांग मांग कर अपनी उदर-पूर्ति करनी चाहिए। सिख धर्म इस गृहस्थ त्याग का विरोध करता है। क्योंकि जंगल में वास करके भी मन टिकता नहीं तथा योगी फिर गृहस्थियों से मांगने आते हैं। गुरू नानक देव जी ने सिद्ध गोसटि में फर्माया है :

"हाटी बाटी नीद न आवै पर घरि चितु न डोलाई ।।

बिनु नावै मनु टेक न टिकई नानक भूख न जाई ।।

हाटु पटणु घरु गुरू दिखाइआ सहजे सचु वापारो ।।

खंडित निद्रा अलप अहारं नानक ततु बीचारो ।।" (रामकली, म: 1, 939)

घरों तथा बस्तियों में रह कर व्यक्ति सावधान रह सकता है तथा मन को परमात्मा के नाम के द्वारा अच्छी प्रकार से वश में रख सकता है। योगी का मन बस्तियों से दूर रह कर डोलता रहता है। वह घरों में मांगने आता है तथा चित डुला लेता है। गुरू साहिब ने हमें मंडी, दुकान तथा घर में रहते हुए सहज का मार्ग बताया है। थोड़ा खाकर तथा थोड़ा सोकर परमात्मा का नाम लिया जा सकता है तथा मुक्ति प्राप्त की जा सकती है।

श्री गुरू नानक देव जी फुर्माते हैं :

जैसे जल महि कमलु निरालमु मुरगाई नै साणे ।।

सुरति सबदि भव सागरु तरीऐ नानक नामु वखाणे ।।

रहहि इकांति एको मनि वसिआ आसा माहि निरासो ।।

अगमु अगोचरु देखि दिखाए नानकु ता का दासो ।। (रामकली, म: 1, 937)

जिस प्रकार कमल का फूल पानी में अभिज रहता है तथा मुरगाबी नदी के पानी में असंग रहती है, इसी प्रकार ईश्वर का नाम जप कर मनुष्य इस संसार में रहते हुए इससे निरलेप रह सकता है। आशा में निराश रह सकता है तथा इस प्रकार अगम तथा अगोचर परमात्मा को देख लेता है।

(6) योगियों के भेख :

गोरख मत के योगियों के भेख का सिख धर्म ने कड़ा विरोध किया है। श्री गुरू नानक देव जी फुर्माते हैं :

जोगु न खिंथा जोगु न डंडै जोगु न भसम चढ़ाईऐ ।।

जोगु न मुंदी मूंडि मुडाईऐ जोगु न सिडी वाईऐ ।।

अंजन माहि निरंजनि रहीऐ जोग जुगति इव पाईऐ ।। 1 ।।

गली जोगु न होई ।।

एक द्रिसटि करि समसरि जाणै जोगी कहीऐ सोई ।। 1 ।। रहाउ ।।

जोगु न बाहरि मड़ी मसाणी जोगु न ताड़ी लाईऐ ।।

जोगु न देसि दिसंतरि भविऐ जोगु न तीरथि नाईऐ ।।

अंजन माहि निरंजति रहीऐ जोग जुगति इव पाईऐ ।। 2 ।।

सतिगुरु भेटै ता सहसा तूटै धावतु वरजि रहाईऐ ।।

निझरु झरै सहज धुनि लागै घर ही परचा पाईऐ ।।

नानक जीवतिआ मरि रहीऐ ऐसा जोगु कमाईऐ ।

वाजे बाझहु सिडी वाजै तउ निरभउ पदु पाईऐ ।।

अंजन माहि निरंजनि रहीऐ जोग जुगति इव पाईऐ ।। (सूही, म: 1, 730)

गोदड़ी पहन लेना, हाथ में डंडा पकड़ना तथा शरीर पर राख मल लेना, प्रभु को मिलने के साधन नहीं है। कानों में मुद्रा डालने से, सिर मुंडाने से तथा सिडी बजाने से प्रभु का मिलाप नहीं होता। प्रभु तब मिलता है यदि माया में रहते हुए इससे निरलेप रहें। योगी वह होता है जो सभी को एक समान समझे। मड़ियों में, समाधि लगाने से, देश - प्रदेश भटकने से, तीर्थ स्नान से प्रभु नहीं मिलता । गुरू के मिलने से प्रमात्मा मिलता है। संसार में कार्य करते विकारों से हट कर सिमरन अभ्यास करने वाले के भीतर स्वयं सुरीला नाद बजने लग जाता है तथा व्यक्ति आत्मिक अवस्था में पहुंच जाता है :

सुरति सबदु साखी मेरी सिङी बाजै लोकु सुणै ।।

पतु झोली मंगन कै ताई भीखिआ नामु पड़े ।।

बाबा गोरखु जागै ।।

गोरखु सो जिनि गोइ उठाली करते बार न लागै ।।

पाणी प्राण पवणि बंधि राखे चंदु सूरजु मुखि दीए ।।

मरण जीवण कउ धरती दीनी एते गुण विसरे ।।

सिध साधिक अरु जोगी जंगम पीर पुरस बहुतेरे ।।

जो तिन मिला त कीरति आखा ता मनु सेव करे ।।

कागदु लूणु रहै घ्रित संगे पाणी कमलु रहै ।।

ऐसे भगत मिलहि जन नानक तिन जमु किआ करै ।। (रामकली, महला 1, 877)

हे जोगी, मेरा गोरख सदा जागता है। परन्तु गोरख वह है जिसने सृष्टि पैदा की है जो प्रभु सारे जगत को सुनता है, उसके चरणों में सुरति जोड़ना मेरे लिए शब्द है। उसे अपने भीतर साक्षात देखना मेरी सिङी बजाना है। उस परमात्मा से नाम की भीख मांगने के लिए मैंने झोली डाली हुई है। जीवों ने उस परमात्मा को भुला दिया है, जिसने **पवन, पानी, सूर्य तथा चांद** आदि बनाए हैं। संसार में अनेकों योगी घूम रहे हैं। मैं उनसे मिल कर परमात्मा की स्तुति ही करूंगा। भगत परमात्मा के चरणों में मिले रहते हैं तथा वे गलते नहीं, जैसे नमक घी में डालने से गलता नहीं तथा कमल का फूल पानी में कुमलाता नहीं।

सुणि माछिंद्रा नानकु बोलै ।।

वसगति पंच करे नह डोलै ।।

ऐसी जुगति जोग कउ पाले ।।

आप तरै सगले कुल तारे ।।

सो अउधूतु ऐसी मति पावै ।।

अहिनिसि सुंनि समाधि समावै ।।

भिखिआ भाइ भगति लै चलै ।।

होवै सु त्रिपति संतोखि अमुलै ।।

धिआन रूपि होइ आसणु पावै ।।

सचि नामि ताड़ी चितु लावै ।।

नानकु बोलै अंमृत बाणी ।।

सुणि मछिंद्रा अउधू नीसाणी ।।

आसा माहि निरासु वलाए ।।

निहचउ नानक करते पाए ।।

प्रणवति नानकु अगमु सुणाए ।।

गुर चेले की संधि मिलाए ।।

दीखिआ दारू भोजनु खाइ ।।

छिअ दरसन की सोझी पाइ ।। (रामकली, महला 1, 877)

हे माछंद्र वास्तविक विरक्त वह है जो दिन-रात ऐसे टिकाव में रहता है जहां माया के संकल्प नहीं उठते। वह पांच विकारों को वश में रखता है। यह उसकी जीवन-प्रणाली तथा योग-साधना है। इससे वह स्वयं पार हो जाता है तथा दूसरों को भी पार ले जाता है। वह परमात्मा के प्रेम तथा भक्ति में जीवन व्यतीत करता है। यह उसकी आत्मिक भिक्षा है जो संतोष उत्पन्न करती है। प्रेमा-भक्ति से वह प्रभु के साथ एकमेव हो जाता है। यही उसकी आत्मा का आसन है। परमात्मा के नाम में चित जोड़ना ही उसकी ताड़ी (लिव) है। वह परमात्मा की स्तुति करता है तथा आशा में रहता हुआ निरलेप जीवन व्यतीत करता है। वह गुरू की शिक्षानुसार चलता है तथा इस प्रकार उसे छ: दर्शनों का ज्ञान हो जाता है।

इकि वण खंडि बैसहि जाइ, सदु ने देवही ।।

इकि पाला ककरु भंनि, सीतलु जलु हेंवही ।।

इकि भसम चढ़ावहि अंगि, मैलि न धोवही ।।

इकि जटा बिकट बिकराल, कुलु घरु खोवही ।।

इकि नगन फिरहि दिनु राति, नींद न सोवही ।।

इकि अगनि जलावहि अंगु, आपु विगोवही ।।

विणु नावै तन छारु, किआ कहि रोवही ।।

सहनि खसम दुआरि, जि सतिगुरु सेवही ।। (वार मलारे की, महला 1, 1274)

कई मनुष्य जंगलों में जा बैठते हैं तथा मौन धार लेते हैं। कई ठण्डे पानी में गोता लगाते हैं। कई शरीर पर राख मलते हैं तथा स्नान नहीं करते। कई भयानक जटाएं बढ़ा लेते हैं, अपनी कुल तथा घर गंवा लेते हैं। कई दिन रात नग्न पड़े रहते हैं, कई अग्नि में अपना शरीर जलाते हैं, भाव धूनियां तापते हैं तथा इस प्रकार से अपने आप को ख्वार करते हैं, वे प्रभु के नाम से विहीन रह कर अपना जीवन व्यर्थ गंवाते हैं। प्रभु के दर पर वही शोभा पाते हैं जो उसके हुकम में चलते हैं।

निवली करम भुअंगम भाठी, रेचक पूरक कुंभ करै ।।

बिनु सतिगुरि किछु सोझी नाही, भरमे भूला बूडि मरै ।।

अंधा भरिआ भरि भरि धोवै, अंतर की मलु कदे न लहै ।।

नाम बिनां फोकट सभि करमा, जिउ बाजीगरु भरमि भूलै ।। (प्रभाती, महला 1, 1343)

हे प्रभु, तेरा नाम जपना ही मेरा सबसे बड़ा धार्मिक कार्य है। तेरे नाम कि बिना मेरे भीतर अवगुण उत्पन्न हो जाते हैं। अज्ञानी व्यक्ति न्यौली कर्म करता है, कुंडलनी नाड़ी के द्वारा दसम द्वार में श्वास चढ़ाता है, उतारता है तथा टिकाता है। परन्तु इस प्रकार वह गलत मार्ग पर चल कर अपनी आत्मिक मृत्यु कर लेता है तथा सतिगुरू की शरण में आए बिना उसे सही जीवन की समझ नहीं पड़ती। वह विकारों की मैल से भरा रहता है। वह न्यौली कर्म द्वारा मैल धोने का यन्त्र करता है, परन्तु मन की मैल इस प्रकार नहीं उतरती। यह रेचक, पूरक आदि सारे ही कर्म परमात्मा के नाम के बिना व्यर्थ हैं। कर्मकाण्डी, मनुष्य नाटक - चेटक के भ्रम में पड़ कर वास्तविकता को भूल जाता है।

(ञ) सिख धर्म का शब्द - सिद्धान्त

श्री गुरू नानक देव जी ने योगियों (सिद्धों) के साथ चर्चा की। योगी श्री गुरू नानक देव जी के बताए मार्ग का विरोध करते थे। वे यह पसन्द नहीं करते थे कि लोगों की श्रद्धा योग मत से जाती रहे तथा लोग योगियों की प्रशंसा करने से हट जाएं। इस चर्चा में श्री गुरू नानक देव जी ने अपने मार्ग की विस्तार सहित व्याख्या की। इस मार्ग को शब्द - मार्ग कहा जाता है। इस शब्द - मार्ग का केन्द्रीय भाव यह है :

किआ भवीऐ सचि सूचा होइ ।।

साच सबदु बिनु मुकति न होइ ।। (रामकली , महला 1)

शब्द सिद्धान्त का नकारात्मक पक्ष :

1. प्रकृति तथा पुरुष दो प्रारम्भिक भिन्न - भिन्न वस्तुएं नहीं ।
2. केवल आत्मा तथा प्रकृति माया को ही अलग - अलग करना मुक्ति नहीं ।
3. ग्रहस्थ आश्रम छोड़ कर जंगलों में रहना मुक्ति का साधन नहीं।
4. शरीर को अत्याधिक कष्ट देने की आवश्यक नहीं।
5. सिद्धियां प्राप्त करना गलत आदर्श है। यह इन्सान को मुक्ति के मार्ग से दूर ले जाती हैं। इनमें नहीं पड़ना चाहिए।
6. ऐसे भेखों की आवश्यकता नहीं जैसे कि मुंद्रां, गोदड़ी, डंडा, सिडी आदि।
7. पूरक, रेचक, कुंभक, न्यौली कर्म, नेति, धोती आदि मन की मैल को साफ नहीं करते।

शब्द सिद्धान्त का सकारात्मक पक्ष :

शब्द सिद्धान्त का सकारात्मक पक्ष यह है कि एक परमात्मा में विश्वास रखो। अपनी आत्मा का उस परम-आत्मा से मेल करने का आदर्श समझ रखो। इसी में मुक्ति है। मुक्ति प्राप्त करने के लिए ग्रहस्थ आश्रम में रहो। दुनिया के काम धन्धे करो। हर समय प्रभु का नाम जपो। माया में रहते हुए इससे निरलेप रहो। नाम सिमरन द्वारा अपनी हउमै तथा विकारों को वश में रखो। मन को जीतो। परमात्मा का नाम सुनो, उसे मानो, उसकी स्तुति करो, उससे प्रेम करो, उसका नाम जपो तथा सुमिरन करो। इस प्रकार सहज में रहते हुए ही मुक्ति प्राप्त हो सकती है।

सबदै का निबेड़ा सुणि तू अउधू बिनु नावै जोगु न होई ।।

नामे राते अनदिनु माते नामै ते सुखु होई ।।

नामै ही ते सभु परगट होवै नामै सोझी पाई ।।

बिनु नावै भेख करहि बहुतेरे सचै आपि खुआई ।।

सतिगुर ते नामु पाईऐ अउधू जोग जुगति ता होई ।।

करि बीचारु मनि देखहु, नानक बिनु नावै मुकति न होई ।। (रामकली, महला 1)

अत : उपरोक्त विचार से ज्ञात होता है कि योग मत की विचारधारा गुरमत के साथ मेल नहीं खाती तथा गुरू साहिब ने इस विचारधारा का गुरबाणी में भरपूर खण्डन किया है। श्री गुरू नानक देव जी ने अपनी प्रचारक-यात्राओं के समय योगियों को नाम जपने तथा सुमिरन करने के लिए प्रेरित किया, जिसमें वे विश्वास नहीं रखते थे।

लॉन्च करता : जसबीर सिंघ
Mob. : 099881-60484, 62390-45985

Type Setting : Radheshyam Choudhary
Mob. : 098149- 66882